दलित स्त्री कविता का विद्रोह एवं आत्म चेतना का प्रसार

शोध सार- प्रस्तुत शोध आलेख में दलित स्त्री कविता के मूल स्वर पर बात की गयी है,जहाँ दलित स्त्री की अभिव्यक्तियों में दमन, शोषण, अपमान और तिरस्कारों की ध्वनियों के साथ-साथ उनके अपने सपनों, आकांक्षाओ, सुख-दुख की प्रतिध्वनियां भी सुनने को मिलती हैं। शिक्षा के अभाव में दलित स्त्री रचनाकारों की संख्या कम ही मिलती है, पर कम संख्या में होने पर भी दलित स्त्री विमर्श के चलते बहुत सी दलित लेखिकाओं ने अपने धारदार लेखनी के माध्यम से साहित्य में अपनी अलग पहचान बनाया है। दमनकारी सामाजिक संरचनाओं के विघटन और उनकी लोकतांत्रिक पूर्ण रचना के लक्ष्य को लेकर वे निरंतर आगे बढ़ रही हैं। हिन्दी दलित कवयित्रियों में सुशीला टाकभौरे, कुसुम मेघवाल, रजनी तिलक, अनीता भारती, रजत रानी मीनू, रजनी सिसोदिया, हेमलता महेश्वरी पुष्पा भारती, नीरा परमार, रजनी अनुरागी, सुजाता पारमिता, पूनम तुषामड़ आदि कवयित्रियां हैं, जिन्होंने अपनी कविताओं में अपनी स्वानुभूति को जीवंत रूप प्रदान किया।

मूल आलेख

प्रस्तावना- दलित स्त्री काव्य का उद्गार आत्म सम्मान और अस्मिता के धरातल से होता है। दलित स्त्रियों की स्थिति उस परिवेश,समाज से आकीं जाती है जहाँ से उनका अस्तित्व होता है, जहाँ पर वे जन्म लेती हैं, निवास करती हैं, ऐसे समाज में जहाँ सवर्ण स्त्रियाँ भी पारम्परिक छवि में बांधी गयी हो वहाँ पर दलित वर्ग की स्त्री की दशा और भी दयनीय रही है, वे पहले ही उस वर्ग से आती हैं जो समाज में शोषित रहा है। स्त्री, दलित और गरीबी का तिहरा अभिशाप दलित स्त्रियाँ झेलती हैं। गरीब और अनपढ़ होने की वजह से वे घर से लेकर बाहर तक हिंसा का शिकार होती हैं फिर भी वे जीविकोपार्जन हेतु घर से बाहर पुरुषों के साथ काम करती हैं, यहाँ पर दलित स्त्रियाँ, सवर्ण स्त्रियों से अलग सशक्त छवि वाली हो जाती हैं जहाँ वे भाग्यवादी न होकर कर्मवादी होकर बदलाव के दीप जलाती हैं। दलित कवयित्री **कुसुम मेघवाल** अपनी कविता '**बदल सकती हो तुम अपना भाग्य'** में दलित स्त्री की सशक्त छवि को पेश करते हुए कहती हैं –

"अपनी सहायता स्वयं की

तो बदल गई

दीन-हीन परिस्थितियाँ मेरी

गर्व है मुझको आज

स्वयं पर, पुरुषार्थ पर

जिसकी बदौलत पाया है मैंने

शिक्षा, पैसा,वैभव

और सब कुछ

मत कहो तुम आज ऐसा

मिला है मुझे भाग्य से

तुम भी बदल सकती हो

अपना भाग्य अपनी किस्मत

अपने ही पुरुषार्थ से

अपनी हिम्मत से

अपने साहस से" [1]

<u>समानता का अधिकार और संघर्ष</u> –

इतिहास गवाह रहा है कि दलित स्त्रियों को लैंगिक असमानता के साथ-साथ जातिगत भेदभाव को भी झेलना पड़ता है। इसी कारण दलित स्त्री कविता का मूल स्वर सामाजिक न्याय, अस्मिता एवं विरोध की प्रवृत्ति का रहा है। दलित स्त्रियों ने अपनी कविताओं के रूप में सदियों से हो रहा उनके साथ शोषण, पीड़ा और संघर्ष व्यक्त किया गया है। । दलित स्त्रियों में अपनी स्थिति के लिए जिम्मेदार सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध आक्रोश है । उनमें रूढीगत सोच को जड़ से उखाड़ने की प्रबल इच्छा रही है, इन्हीं इच्छाओं को कविताओं के रूप में अपने भावों को व्यक्त किया है। गरीबी, लाचारी तथा असहायता में जीवन जीने को मजबूर दलित स्त्रियों को नारी जाति का दर्द क्या होता है ? बखूबी मालूम है। दलित बालिका बचपन से ही सुंदर सपने और कल्पना से दूर रहती है। वह काम और चिंता के साथ बड़ी होती है । कम उम्र से ही समझौता और अभावग्रस्तता में जीने की आदत उसे हो जाती है। कवयित्री **रमणिका गुप्ता** अपनी कविता में दलित बालिका के इसी मार्मिक स्वरूप को दिखाते हुए कहती हैं –

"पाँच बरस की उम्र में ही

हो जाती है सयानी

घर के कामकाज में माँ का हाथ बंटाती

माँ के बदले कर आते हैं चौका बासन

बड़े-बड़े झाड़ू थे नन्हे - नन्हें हाथों के आगे

नौ दस बरस की उम्र में ही

वे हो जाती हैं जवान" [2]

<u>दलित स्त्रियों में विद्रोह का स्वर -</u>

दलित स्त्रियाँ अभावग्रस्त, शोषित अपनी गृहस्थी चलाने के लिए दिन-रात खटती, जहालत का जीवन जीने पर मजबूर रहती हैं। पारम्परिक भारतीय समाज जो एक तरफ स्वयं को प्रगतिशील एवं बुद्धिजीवी घोषित करता है वहीं दूसरी तरफ हाड़मांस की एक स्त्री को डायन का रूप भी दे देता है। ये गूंगा, बहरा, अंधा, असंवेदनशील समाज दलित स्त्रियों के पैरों में शोषण की बेड़ियाँ डाल देता है। दलित कवयित्रियाँ समाज में दलित स्त्री के साथ हो रहे शोषण के सभी पहलुओं को एक-एक कर खोलती चलती है तथा सदियों से जड़ें जमाए हुए दमनकारी नीतियों की पोल खोलती है। दलित स्त्रियों के शोषण को लेकर लेखक **राजेंद्र यादव** कहते हैं **– "हमारे समाज में नैतिकता और सारे मानदंड स्त्री शरीर से तय होते हैं और उसका निर्वाह केवल स्त्री को ही करना पड़ता है सेक्स के मामले में स्त्री का जो शोषण होता है उस अनुभव को केवल स्त्री ही जानती है उम्मीद है दलित स्त्रिया उस अनुभव को लिखेंगी" [3]**

सामाजिक व्यवस्था इंसान से बढ़ कर होती है। दलित स्त्रियों को उनकी जाति से ही पहचाना जाता रहा है। योग्य और प्रतिभावान होने पर भी उन्हें अपमानित एवं उपेक्षा का शिकार होना पड़ता है, इन्हीं भावों की आपूर्ति कवयित्री **रजनी अनुरागी** अपनी कविता **'जब भी योग्यता की बात हुई'** में कहती हैं –

"जब भी योग्यता की बात हुई

कमतर आँका गया है मुझे

और जातिवादी प्रतिमानों से मापा गया है मुझे

मैं बहिष्कृत हूँ सदियों से

अपनी ही जमीन और अपने आप से

ज्ञान और संपदा से वंचित किया गया मुझे

लेकिन अब मैं जाग चुकी हूँ

अपनी ताकत भाँप चुकी हूँ

खुद पर है मुझको विश्वास

और इसी विश्वास पर

सिर उठाकर चलने का करती हूँ निरंतर प्रयास" [4]

आज की दलित स्त्री भले ही अशिक्षित हो, गरीब हो, शोषित हो फिर भी वो सशक्त छवि वाली है। अपने खिलाफ़ होने वाले अत्याचारों का मुंहतोड़ जवाब देने में सक्षम हैं पहले दलित स्त्रियाँ कर्तव्य बोध और अभाव हीनता के कारण अपना जीवन न्यौछावर ही करती रही हैं लेकिन अब दलित स्त्री स्वयं शोषण के प्रति सचेत हो चुकी है। वह जागरूक होकर अपने साथ होने वाले भेदभाव व शोषण का विरोध करना जान गयी है। इसी संदर्भ में कवयित्री **पुष्पा भारती** अपनी कविता **'दासता से मुक्ति'** में लिखती हैं –

"शोषकों और शोषण

सावधान मुट्ठियाँ भिंच रही है

अब समवेत स्वर में

उखाड़ फेंकने के लिए

युगों-युगों की तुम्हारी दास्ताँ

तन रही है मुट्ठियाँ आकाश में

तुम्हारे छल-प्रपंच जान

तुम्हारे शोषण का अंत करने

वे आगे बढ़ चुकें हैं" [5]

दलित कवयित्रियों की कविता में स्त्री स्वतंत्रता की चेतना –

वर्तमान समय विज्ञान और तकनीकि का है । लोगों के रहन-सहन से लेकर पहनावे में भी बदलाव आ गया है पर लोगों की दूषित मानसिकता अभी भी बदल नहीं पाई है । आज भी भारत जैसे विकासशील देश में जाति के आधार पर दलित समुदाय को अपमानित करने की प्रवृत्ति नहीं बदली है,आए दिन ऐसी खबरें समाचार पत्रों की सुर्खियां बनकर मन को विचलित करती है कि दलित वर्ग के व्यक्ति के साथ हिंसा की गई उन्हें अपमानित एवं प्रताड़ित किया गया गौर करने की बात ये है कि इस तरह का घृणित कार्य हमारे समाज में हो रहा है फिर भी उस पर सुनवाई के नाम पर खानापूर्ति महज होता है। इसी असमानता और शोषण को समाप्त करने की ललक दलित कवयित्रियों की लेखनी में खुलकर सामने आता है। भारतवर्ष में बड़े -बड़े शिक्षण संस्थानों में दलित वर्ग के छात्रों को मानसिक रूप से प्रताड़ित करने की घटनाएँ आए दिन होती रहती हैं । पीड़ित दलित छात्र मनुवादी मानसिकता के चलते आत्महत्या तक करने को विवश हो जाते हैं। दलित बालिकाएं बचपन से ही घरेलू कामगार के तौर पर काम पर लग जाती है। अगर कुछ दलित लड़कियां शिक्षा प्राप्त करने के लिए स्कूल जाती है तो कुंठित मानसिकता के शिकार शिक्षक एवं शिक्षिकाएं बालिकाओं के साथ भेदभाव अपमानजनक व्यवहार करते पाए जाते हैं उन्हें छोटी-छोटी गलतियों पर दुत्कारा एवं घुड़का जाता है दलित कवयित्री **पूनम तुषामड़** की कविता '**मुनिया**' इन संदर्भों की पुष्टि करती हैं –

"तेज तमाचे की आवाज के साथ

अध्यापिका अनुशासन का पाठ पढ़ाती हैं

तपती धूप में मैदान में चक्कर कटवाती है

मुनिया थककर गिर जाती है

मुझे चाचा नेहरू याद आते हैं" [6]

दलित कवयित्री दलित स्त्रियों के अधिकारों एवं समाज में उनकी परम्परागत छवि को उतार फेंकने की बात करती है और उनमें प्रेरणा का अथाह सागर समाया हुआ है जिसको किसी सीमा में बांध पाना मुश्किल है। दलित कवयित्री स्त्री जीवन के उन हिस्सों को भी सामने लाती हैं जिन्हें अक्सर समाज के द्वारा अनदेखा कर दिया जाता है। इनकी कविता समाजिक परिवर्तन और दलित स्त्रियों के साथ ही समाज में भी सुधार की महत्वपूर्ण बात करती है जिससे कि हाशिए पर ठेला गया यह समाज स्वयं को समाज के मुख्यधारा में खड़ा करके समानता के धरातल पर सम्मान पूर्वक जीवन जीने की बात कर सके। दलित कवयित्री **सुशीला टाकभौरे** अपने इसी तरह के क्रांतिकारी विचारों शब्द देते हुए कहती हैं –

"शोषित के कर्म को

पीड़ितों के दर्द को

पीड़ितों के दर्द को,चित्कार को हुंकार में

मैं बदल देना चाहती हूँ

पंख मेरे फड़फड़ाते हैं" [7]

दलित स्त्री कविताओं में आशा और प्रेरणा के स्वर भी सुनाई पड़ते हैं। दलित कवयित्रियाँ हार न मारने वाले स्वर के साथ जुझारू प्रवृत्ति की बनकर एक ऐसे समाज की कल्पना करना चाहती है या स्वप्न देखती है जहाँ उसे सम्मान, समानता और न्याय के धरातल पर बराबर समझा जाए। एक ऐसा समाज जहाँ जाति, लिंग समुदाय, वर्ग के भेदभाव से परे सभी में समता व समानता व्याप्त हो दलित कवयित्रियाँ ऐसे समाज का निर्माण करना चाहती हैं। जहाँ दलित महिलाओं को समान अवसर उपलब्ध हो उन्हें दलित व महिला होने पर शोषित और अपमानित न किया जाए। दलित स्त्री का संघर्ष किसी जाति विशेष या वर्ग विशेष से नहीं है बल्कि दूषित विचारों, मानसिकताओं एवं सड़ी गली रूढ़िबद्ध परम्पराओं से विरोध है जो उसका शोषण करती है उसे मनुष्यता के नाम पर शर्मिंदा व प्रताड़ित करती है। उसका संघर्ष ऐसे प्रशासन व्यवस्था एवं कानून से है जहाँ उसके साथ मनुष्य होने के बावजूद भेदभाव,असमानता का व्यवहार किया जाता है। दलित लेखक **शरण कुमार लिम्बाले** इसी संदर्भ में अपनी पुस्तक **दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र** में कहते हैं – **"यह आक्रोशपूर्ण है और यह आक्रोश छाती पीटने जैसा है दलित लेखकों का यह आक्रोश दरअसल आक्रोश नहीं बल्कि विद्रोह और क्रोध की अभिव्यक्ति है। दलित साहित्य में व्यक्त हुआ क्रोध सहज भाव है। दलित साहित्य में सामाजिक वेदना से आक्रोश पैदा हुआ है यह वेदना मूक थी इस मूक वेदना को बाबा साहब अंबेडकर के रूप में मूक नायक मिल गया इसलिए रुके हुए बांध के टूटने की तरह यह वेदना व्यक्त हुई।" [8]**

<u>स्त्री - स्त्री में भेद –</u>

सवर्ण और दलित स्त्रियाँ,स्त्री होने के धरातल पर दोनों एक सामान खड़ी नजर आती हैं, वही जातिगत आधार पर एक सर्वण स्त्री स्वयं को दलित स्त्री से कहीं श्रेष्ठ मानती हैं । वह अपने-आपको दलित स्त्री के साथ नहीं जोड़ना चाहती, भले ही वह स्वयं शोषित एवं प्रताड़ित हो किन्तु जब दलित स्त्री की बात आती है तो एक सवर्ण स्त्री हमेशा अपने-आपको श्रेष्ठ समझती है । सामाजिक आधार पर बराबरी की बात करें तो लिंगभेद निषेध के स्तर पर तो वे दलित स्त्री को साथ नजर आएँगी,पर दूसरे मुद्दों पर दोनों के लिए बराबरी के मायने अलग अलग-अलग हैं। ज़ाहिर सी बात है कि सवर्ण स्त्री को शिक्षा का अवसर पहले प्राप्त हुआ । शिक्षित होकर वह अपने अधिकारों की बात करती है। दलित स्त्री को अधिकार,मुद्दें उनके स्त्रीवाद में शामिल नहीं रहे इतना ही नहीं सवर्ण स्त्री,स्त्री होते हुए भी दलित स्त्री को वर्ग जाति के आधार पर निम्न मानकर स्वयं को उच्च वर्ग का मानते हुए दलित स्त्री का शोषण करने से परहेज नहीं करती है। तब सवर्ण स्त्री एवं दलित स्त्री के बराबरी के जो अर्थ है वो एक नहीं हो सकते हैं। **डॉ. चमन लाल** का कहना है कि **– "दलित स्त्रियों तिहरे शोषण का शिकार होती हैं जबकि दलित पुरुष दोहरा दमन झेलते हैं।आर्थिक शोषण व भारतीय जाति व्यवस्था में निम्न जाति का होने का सामाजिक दमन दलित स्त्रियों को ये दोनों दमन तो दलित पुरुषों के साथ झेलने पड़ते ही है सामान्ती मूल्य व्यवस्था के चलते वे घरों के भीतर पुरुष दमन का शिकार भी होती हैं।"** [9]

<u>जातिगत लिंग-भेद और दलित स्त्रियाँ –</u>

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में इंसान और उसके श्रम से भी बढ़कर जाति है। दलित स्त्रियों ने इसी जाति व्यवस्था पर बात की है । योग्य और प्रतिभावान होने पर भी उन्हें अपमानित एवं उपेक्षित होना पड़ता है।फिर भी वो हिम्मत नहीं हारती हैं।अपने साहस के बलबूते,वे अपना भाग्य बदलने की क्षमता रखती हैं।दलित कवयित्री **पूनम तूषामड़** अपनी कविता '**कैद**' में स्त्री संघर्ष की सफलता का चित्र प्रस्तुत करते हुए कहती हैं –

"और कितनी चुनोगे तुम दीवारे

मुझे कैद करने में

मैं सेंध लगा दूँगी

हर दीवार में" [10]

स्त्री को कमजोर मानकर उसके काम को कमतर आंकने की प्रवृत्ति हमेशा से समाज में मौजूद रहीं है, उसके काम को कमतर आंका जाना,उसका अपमान उसके साथ भेदभाव एवं हिंसा को समाज मौन स्वीकृति प्रदान कर देता है ऐसा सदियों से होता रहा है इन्हीं भावों को कवयित्री **डॉ. हेमलता माहेश्वर** अपनी कविता **'नारी की छटपटाहट'** में व्यक्त करते हुए लिखती हैं -

"अब नारी को

घर बाहर का अंतर समझ आया था

फिर एक बार

नारी का मन

छटपटाया था

उसके हिस्से

छटपटाहट का ही दर्द आया था" [11]

दलित वर्ग में साक्षरता बहुत कम है और उसमें महिलाओं की शिक्षा में भागीदारी नाममात्र की है।स्वतंत्रता के इतने साल बीत जाने के बावजूद दलित स्त्री पक्ष शिक्षा के संदर्भ में कमजोर है। इसका बहुत बड़ा कारण यह भी है कि आज भी महिलाएं पुरुषों पर परम्परागत ढंग से निर्भर हैं किन्तु धीरे- धीरे ही सही यह परिस्थितियाँ बदल रही हैं।महिलाओं में भी बौद्धिक चेतना का विकास तीव्र गति से हो रहा है।हिन्दी दलित साहित्य में दलित महिलाएँ, दलित अस्मिता को लेकर उपस्थित हुई हैं। दैनंदिन में अनेक प्रकार के दमन की शिकार दलित स्त्रियां होती हैं। जहाँ उन्हें कदम- कदम पर अपमानित किया जाता रहा है। कवयित्री **स्वरूप रानी** कहती हैं –

"अरे हाँ- अपनी जिंदगी को मैंने जिया कब ?

घर में पुरुष अहंकार एक गाल पर थप्पड़ मारता है तो

गली में वर्ण आधिपत्य दूसरे गाल पर चोट करता है" [12]

स्त्री का अपना कुछ भी नहीं है वह केवल त्याग और समर्पण की मूर्ति बनकर रह जाती है और उसे बचपन से ही यह समझाया जाता है कि यही हमारी संस्कृति के मूल्य है। सुविख्यात लेखिका **प्रभा खेतान** भी अपनी आत्मकथा **'अन्या से अनन्या'** तक में लिखती हैं – **"आखिर हम स्त्रियां अपने प्रिय पुरुष के अहं की तुष्टि के लिए खुद का अवमूल्यन क्यों करती हैं ? इसलिए गुलाम की तरह उस पुरुष की हर मूर्खता एवं कुंठा को झेलती रहती हैं"।[13]** पितृसत्तात्मक समाज ने हमेशा से पुरुषों के ही शौर्य गाथाओं का गुणगान किया है। दलित स्त्री के साथ होने वाले शोषण को उसका भाग्य करार दिया जाता रहा है। हिंसा, बलात्कार की शिकार स्त्री समाज के द्वारा ठुकराई जाती है,उसके अपने घर में ही उसे जगह नहीं मिलती है।दलित कवयित्री **रजनी अनुरागी** अपनी कविता में कहती हैं –

"तुम कल्पना पर होकर सवार

लिखते हो कविता

और हमारी कविता

रोटी बनाते समय जल जाती है अक्सर

कपड़े धोते हुए

पानी में बह जाती है कितनी ही बार

झाड़ू लगाते हुए

साफ हो जाती है मन से

पोछा लगाते हुए

गंदले पानी में निचौड़ जाती है" [14]

दलित स्त्री कविताओं में आशा और प्रेरणा के स्वर भी सुनाई पड़ते हैं।दलित कवयित्री हार ना मानने वाली मनोबल के साथ जुझारू प्रवृत्ति की बनकर एक ऐसे समाज की कल्पना करना चाहती है, जहाँ उसे सम्मान, समानता और न्याय के धरातल पर बराबर समझा जाए। कवयित्री **कांता भीमराव** अपनी कविता **'दीदी तुम'** में इन्हीं विचारों का समर्थन करते हुए कहती हैं-

"दीदी चाहे

तुम मदर टेरेसा सी समुद्र

ना बन सकीं

पर तुम

बड़ के पेड़ की शाखा से

लटकी हुई

वह लता हो

जो खुद तना बन जाती है" [15]

निष्कर्ष –

यह सत्य है कि दलित स्त्री बचपन से ही तमाम सामाजिक बंधनों को निभाते हुए एवं इससे प्रताड़ित होते हुए भी अपने स्वप्नों को पूरा करने के लिए कर्तव्य मार्ग से डटी हुई है। अपनी परम्परागत छवि से अलग दलित स्त्री ने अपने नए स्वरूप को धारण किया जहाँ वो पढ़ने-लिखने के साथ बोलना भी जानती है।अपने साथ हो रहे शोषण एवं असामानता को सिरे से नकारना जानती है दलित स्त्रियों की चेतनाएँ पंख फैलाती हुई स्वतंत्रता एवं समानता के आसमान में उड़ान भरने के लिए तैयार हैं।जहाँ वो अपने हौसलों से अपने जीवन में आने वाली कठिनाइयों, संघर्षों को बिना डरे, हार एवं निराश हुए सामना करने के लिए तैयार हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची –

1.रजनी, तिलक, प्रधान सम्पादक, सह सम्पादक, सुशीला टाकभोरे, समकालीन भारतीय दलित महिला लेखन, स्वराज प्रकाशन, 2015, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 202

2.रमणिका, गुप्ता, युद्धरत आम आदमी, दलित चेतना विशेषांक 1995,पृष्ठ संख्या 31

3.राजेंद्र, यादव, प्रभा खेतान, अभय कुमार दुबे, पितृसत्ता के नए रूप स्त्री और भूमण्डलीकरण, राजकमल प्रकाशन, 2023, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 18

4.रजनी, तिलक, प्रधान सम्पादक, सह सम्पादक, सुशीला टाकभौरे, समकालीन भारतीय दलित महिला लेखन, स्वराज प्रकाशन,2015, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या, 53

5.डॉ. अलका ,जाधव गडकरी, समकालीन हिन्दी कविता विविध विमर्श, पराग प्रकाशन,2016 कानपुर, पृष्ठ संख्या 115

6.पूनम, तूषामड़, माँ मुझे मत दो, सफाई कर्मचारी आंदोलन 96, पॉकेट आठ सेक्टर 22, रोहिणी, नई दिल्ली 2004, पृष्ठ 22

7.सुशीला, टाकभौरे, स्वाति बूँद और खारे मोती, स्वराज प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2014, पृष्ठ संख्या 45

8.शरण कुमार, लिम्बाले, दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, वाणी प्रकाशन, 2008, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 27

9.डॉ.अलका, जाधव गडकरी, समकालीन हिंदी कविता विविध विमर्श, पराग प्रकाशन ,2016 कानपुर, पृष्ठ संख्या 56

10.रजनी, तिलक, प्रधान संपादक, सह संपादक, सुशीला टाकभोरे, समकालीन भारतीय दलित महिला लेखन, स्वराज प्रकाशन, 2015, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण पृष्ठ संख्या, 204

11.वही, पृष्ठ संख्या 67

12.साक्षान्त, मस्के, परम्परागत वर्ण व्यवस्था और दलित साहित्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण,2014, पृष्ठ संख्या 94

13.सुजाता, आलोचना का स्त्री पक्ष, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2021, पृष्ठ संख्या 26

14.डॉ मंजू, सुमन, दलित नारी एक विमर्श, संकलन संपादन, ज्ञानेन्द्र रावत, सम्यक प्रकाशन,2019 नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ संख्या 126

15.मंजू बाला, हिन्दी कविता में दलित अस्मिता की तलाश, अनुसंधान पब्लिशर, प्रथम संस्करण, 2015, पृष्ठ संख्या 75

साधना सरोज

शोध छात्रा

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

हिन्दी विभाग

वाराणसी